ग्रामीण बेकारी और स्वास्थ्य संबंधी समस्यायें
(RURAL UNEMLOYMENT AND HEALTH PROBLEMS)

ग्रामीण बेकारी
(RURAL UNEMLOYMENT)

भारत में बेकारी की समस्या शताब्दियों पूर्व भी थी और आज भी है । कौटिल्य के अर्थशास्त्र में बेरोजगारी के निवारण के लिए विविध प्रकार के कार्यक्रमों की एक सूची प्राप्त होती है । नगर और ग्रामीण क्षेत्र के व्यक्तियों को किस प्रकार के काम दिए जाएँ इसकी व्याख्या कौटिल्य ने 'अर्थशास्त्र' में विशद रूप में की है । अनाथ, विधवा, बूढ़े, युवा व्यक्तियों को किन–किन स्थानों पर काम करने के लिए भेजा जाए ? इनसे किस प्रकार का काम लिए जाए? इन्हें कितना पारिश्रमिक दिया जाए आदि तथयों का विवरण इस पुस्तक में देखने को मिलता है । कौटिल्य के युग में बेराजगारी की समस्या को न तो इतनी गंभीरता से लिया गया था और न इसे आर्थिक–सामाजिक व्यवस्था के अभिन्न अंग के रूप में समझा गया था । उस समय इसे व्यक्तिपरक समस्या के रूप में लिए जाता था । द्वितीय युद्ध के पश्चात इसे एक आर्थिक–सामाजिक समस्या के रूप में देखा जाने लगा ।

बेरोजगारी किसी एक देश की समस्या न होकर विश्व की समस्या बन गयी है । आज तीसरी दुनिया की चर्चा विश्व के कोने–कोने में हो रही है । ये मूलतः वे देश हैं जहाँ यूरोप के व्यक्तियों ने शासन किया था । इन शासकों ने एशिया, अफ्रीका और लैटिन अमेरिका का मनचाहे रूप में शोषण किया था । इन्हें आज हम अर्थ–विकसित देश कहते हैं । भारत भी इनमें से एक है । इस तरह हम यह भी कह सकते हैं कि बेरोजगारी की समस्या पूँजीवादी–व्यवस्था और नीतियों से जन्मी एक गंभीर समस्या है । इसलिए आज समाजवादी देश जैसे रूस और चीन में यह समस्या नहीं है ।

आज बेरोजगारी की समस्या न केवल भारत बल्कि विश्व की आर्थिक–समस्या के रूप में संकट सूचक बन गई है । अंतर्राष्ट्रीय श्रमिक–संगठन के अनुसार इस समय विश्व में 2,000 लाख श्रमिक बेकार हैं और प्रत्येक वर्ष 25 लाख बेकारों की संख्या इसमें जुड़ती जायेगी । आश्चर्य की बात यह है कि विकसित देशों के प्रत्येक 100 व्यक्तियों में से 20 व्यक्ति बेकार हैं । इन 20 बेकार व्यक्तियों ....बनती जा री रही है ।

बेरोजगारों की संख्या जानने के लिए हमारे पास एकमात्र साधन रोजगार कार्यालयों में चालू रजिस्टरों में दर्ज व्यक्तियों की संख्या हे । यद्यपि ये संख्या वास्तविकता से काफी दूर है क्योंकि असंख्य बेरोजगार व्यक्ति इन कार्यालयों में अपना नाम दर्ज नहीं कराते हैं और जो कुछ आंकड़े हमें प्राप्त होते हैं वे मूलतः नगरीय बेरोजगार व्यक्तियों के होते हैं । इसका कारण है कि बेरोजगार कार्यालय नगरों में ही स्थापित हैं । रोजगार कार्यालयों में रोजगार पाने के इच्छुक व्यक्तियों के दर्ज नामों की संख्या 31 दिसम्बरी, 1990 तक

346.32 लाख थी जो 31 दिसम्बर 1999 तक बढ़कर 403.31 लाख तक पहुँच गई । बेरोजगार व्यक्तियों की संख्या निम्नलिखित सारणी के द्वारा दर्शायी गई है ।

रोजगार कार्यालय में दर्ज व्यक्तियों की संख्या (लाख में)

वर्ष	रोजगार कार्यालयों की संख्या	नये पंजीकरण	अधिसूचित रिक्तियाँ	नियुक्तियाँ	चालू रजिस्टर	पिछले वर्ष की तुलना में चालू रजिस्टरों में प्रतिशत वृद्धि
1	2	3	4	5	6	7
1990	851	65.41	4.91	2.64	346.32	5.7
1991	854	62.36	4.59	2.53	363.00	4.8
1992	860	53.01	4.20	2.39	368.00	1.3
1993	887	55.32	3.85	2.31	362.75	(–) 1.3
1994	891	59.27	3.96	2.05	366.91	1.1
1995	895	58.58	3.85	2.10	367.42	0.1
1996	914	58.72	4.23	2.30	374.29	1.9
1997	934	63.22	3.90	2.70	391.39	4.6
1998	945	58.52	3.58	2.30	400.89	2.4
1999	955	59.66	–	2.20	403.71	0.7

उपर्युक्त बेरोजगारी की सारणी से यह स्पष्ट होता है कि समय के साथ बेराजगारों ि समस्या का निराकरण होना चाहिए था किंतु इसमें रिन्तर वृद्धि हो रहीं है । जहॉ तक ग्रामीण बेरोजगारों का प्रश्न है इसमें भी निरंतर वृद्धि होती जा रही हैं । इसका कारण है कि ग्रामीण समाज की आर्थिक–सामाजिक संरचना में तीव्रता से परिवर्तन हो रहे हैं । गाँव के व्यक्ति अपने परम्परात्मक कार्यों से हटते जा रहे हैं पर उनके पास विकल्प में दूसरे कार्य भी नहीं है जिन्हें करके वे अपनी जीविका अर्जित कर सकें । कृषि कार्य में भी मशीनों का प्रयोग अत्यधिक होने लगा है । इससे असंख्य भूमिहीन श्रमिक जो कृषि कार्य से जुड़े थे, वे बेरोजगार हो गए । ये यंत्रीकरण और औद्योगिकरण में वृद्धि के दुखद परिणाम हैं । श्रमशक्ति की संरचना में अनेक प्रकार के परिवर्तनों को देखा जा...

भारत में श्रमशक्ति में परिवर्तन 1981–91

व्यावसायिक वर्ग	1981			1991		
	कुल	पुरुष	स्त्री	कुल	पुरुष	स्त्री
कृषक	41.58	43.70	33.20	38.41	39.63	34.22

कृषि श्रमिक	24.94	19.56	46.78	26.44	21.05	44.93
कुटीर उद्योग	3.47	3.18	4.59	2.42	2.09	3.53
अन्य श्रमिक	30.01	33.56	16.03	32.73	37.23	17.32

उपयुक्त तालिका में विशेष तयि यह है कि ग्रामीण समाज के परम्परात्मक कार्य जिसमें लघु–उद्योग भी आते है इनमें अत्यधिक गिरावट आई है । असंख्या ग्रामीण कारीगर जो इस उद्योग को करके अपनी जीविका अर्जित करते थे, वे बेकार हो गयें । इसी प्रकार कृषि श्रमिकों में भी कमी आई है । खेती में मशीनों के प्रयोग से कृषि श्रमिकों की खपत कम हो गयी । ये सभी ग्रामीण बेरोजगारी में वृद्धि करते हैं ।

अर्थ की परिभाषा ;डमंदपदह – क्मपिदपजपवदद्ध – विश्व के सभी देशों में बेकारी की समस्या किसी–न–किसी रूप में विद्यमान है । वे औद्योगिक दृष्टि से विकसित देश हों अथवा अविकसित अथवा बहुत पिछड़े हुए इन सभी देशों में बेकारी के कारण समान न होकर असमान हैं । इस दृष्टि से बेकारी की व्याख्या और परिभाषा करना कठिन कार्य हैं । इस संदर्भ में पीगू ने लिखा है – ''बेकारी की अवधारणा अनेक सामान्य अवधारणाओं में से एक हैं जिसके सामान्य महत्व से सभी अवगत हैं फिर भी इसकी ठीक–ठीक परिभाषा करना कठिन है । उदाहरण के लिए क्या हम बेकारी में उन व्यक्तियों को सम्मिलित कर सकते हैं जो काहिल हैं और काम नहीं करना चाहिए हैं ? क्या हम बीमार व्यक्तियों को अथवा जो हड़ताल पर हैं उन्हें शामिल कर सकते हैं अथवा विभिन्न वर्गों के व्यक्ति जो किसी–न–किसी कारण से नौकरी करने योग्य नहीं हैं, क्या हम इन्हें बेकार कह सकते हैं ? इन तथ्यों के आधार पर बेकारी को परिभाषित करना मनमानी करना है ।''

बेरोजगारी का सामान्यतः अर्थ है वह दशा जिसमें एक व्यक्ति, जो काम करने योग्य है और भी जो प्रचलित मजदूरी की दर पर काम करने के लिए इच्छुक है, फिर भी उसे काम नहीं मिलता । बेकारी की इस व्याख्या के अंतर्गत वे व्यक्ति शामिल नहीं किये गये हैं जो शारीरिक अथवा मानसिक रूप से बीमार हैं और काम करने योग्य नहीं हैं । इनमें बीमार, बूढ़े और अपाहिज आते हैं । इसके विपरीत जो स्वस्थ हैं और काम नहीं करना चाहते हैं उनमें भिक्षुक, साधु, संत और सम्पत्ति रहित व्यक्ति आते हैं । ये वे व्यक्ति हैं जो दूसरा पर आश्रित रहकर ही अपनी आवश्यकताओं को पूर्ण करते हैं ।

कार्ल प्रिब्रम के अनुसार – ''बेकारी श्रम–बाजार की वह दशा है जिसमें श्रम–शक्ति की पूर्ति के लिए स्थानों की संख्या से कहीं अधिक होती है ।''...

फेयर चाइल्ड के शब्दों में– ''बेकारी की समस्या क्रिया–वर्ग का एक सामान्य अवधि में सामान्य मजदूरी की दर से तथा सामान्य दशाओं में किसी आर्थिक क्रिया से अनिश्चित रूप से वंचित रह जाना है ।''

पीगू के मतानुसार–''एक व्यक्ति को तभी बेकार कहा जा सकता है जबकि उसके पास कोई काम नहीं होता है और न वह काम करना चाहता है ।''

विशेषताएँ उपरोक्त परिभाषाओं का यदि विश्लेषण करें तो बेरोजगारी की निम्नलिखित विशेषतायें देखने को मिलती हैं–

1. एक व्यक्ति जो काम करने योग्य है और जिसे काम नहीं मिलता हैं ।
2. काम करने के इच्छुक व्यक्तियों को काम नहीं मिलता ।
3. प्रचलित मजदूरी की दर पर काम नहीं मिलता ।
4. बेकारी एक ऐसी दशा है जिसमें श्रम–शक्ति की पूर्ति, काम करने के स्थानों के अनुपात में कही अधिक होती है ।

ग्रामीण बेकारी ;त्नतंस न्दमउचसवलउमदजद्ध

भारत गाँवों का देश है । इस देश का 75 प्रतिशत व्यक्ति ग्रामीण–अंचलों में निवास करता है जिसका प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष संबंध कृषि व्यवसाय से है । इस भू–भाग का अधिकांश व्यक्ति भूमिहीन श्रमिक है जो वर्ष के कुछ माह खेतों पर कार्य करता है । शेष महीनों में वह बेरोजगार रहता है । इस क्षेत्र के कुटीर उद्योगों–धंधें, आज के प्रतिस्पर्धायुक्त युग में समाप्त हो गये हैं । ये उद्योग ग्रामीण क्षेत्रों के व्यक्तियों के लिए अतिरिक्त आय के साधन थे जो समाप्त हो गये हैं । इस आधार पर हम यह कह सकते हैं कि ग्रामीण क्षेत्रों में बेरोजगारों की समस्या में निरंतर वृद्धि हो रही है ।

ग्रामीण–बेरोजगारी का अनुमान भगवती समिति की रिपोर्ट से लगाया जा सकता है । इस रिपोर्ट के अनुसार 1971 में 187 लाख व्यक्ति बेरोजगार थे । इनमें से 161 लाख व्यक्ति ग्रामीण क्षेत्रों से संबंधित थे । रामकृष्ण के अनुसार 1971 में बेरोजगारी (पूर्ण तथा अर्थ–बेरोजगारी) 215 लाख थी जिसमें से 193 लाख व्यक्ति ग्रामीण क्षेत्रों का था और 22 लाख व्यक्ति शहरी क्षेत्र का था । आज यह अनुमान लगाया जाता है कि बेरोजगारी की संख्या 437 लाख और आंशिक बेरोजगारी की संख्या 106 लाख हे । रोजगार दफ्तर के आंकड़ों से यह ज्ञात होात है कि 1971 में इनके दफ्तरों में 57 लाख बेरोजगार पंजीकृत थे । 1980 तक आते आते यह संख्या 1 करोड़ 62 लाख हो गई । यहाँ पर यह भी ध्यान रखने की बात है कि ग्रामीण क्षेत्रों में मुख्यता दो प्रकार की बेरोजगारी देखने को मिलती हैः मौसमी बेरोजगारी और छिपी हुई बेरोजगारी । मौसमी बेरोजगारी के संबंध में शाही आयोग का विचार है कि भारतीय कृषक वर्ष भर में कम से कम 4–5 माह अवश्य बेकार रहते हैं। राधा कमल मुखर्जी के अनुसार उत्तर प्रदेश में सघन कृषि क्षेत्रों में कृषक वर्ष भर में केवल 200 दिन कार्य करता है और शेष दिना बेरोजगार रहता है । डॉ. स्लेटर का भी यह मत है कि दक्षिण भारत में कृषकों को 200 दिन से अधिक काम नहीं प्राप्त हो पाता है ।

ग्रामीण बेरोजगारी के कारण ग्रामीण अंचलों में बेराजगारी के मुख्य कारण निमनलिखित हैं –

1. जनसंख्या का कृषि पर दबाव – कृषि कार्य के लिए जितने श्रमिकों की आवश्यकता है उससे कही अधिक ग्रामीण व्यक्ति उस पर निर्भर है । 70 प्रतिशत व्यक्ति मात्र कृषि पर निर्भर है । इससे कृषि व्यवसाय पर जनसंख्या का दबाव अधिक पड़ता है । इतनी बड़ी जनसंख्या की सामन्य आवश्यकताओं की भी पूर्ति कृषि

समाज नहीं कर पाता है और न ही उन्हें किसी प्रकार की जीविका ही दे पाता है । इससे गॉव में निरंतर बेकारी की समस्या में वृद्धि हो रही है ।

2. कृषि की मौसमी प्रकृति – सामान्यतः कृषि कार्य से जुड़े हुए व्यक्तियों के पास वर्ष में 100 दिन से अधिक कार्य नहीं होता है । फसल के बोन, काटने और खेतों की जुतायी व गुड़ाई के समय व्यक्ति के पास काम होता है, शेष दिन वे बेकार रहते हैं ।

3. कृषि व्यवसाय में अनिश्चितता – भारत में 22 प्रतिशत भूमि के लिए सिचाई की सुविधा प्राप्त है । शेष भूमि वर्षा पर निर्भर करती है । इस देश में मानसून और वर्षा के लिए कुछ भी निश्चित रूप से नहीं कहा जा सकता है । समय पर वर्षा न होने के कारण भूमिहीन श्रमिक बेरोजगार हो जाते हैं ।

4. जनसंख्या में वृद्धि – प्रत्येक वर्ष 2.5 प्रतिशत जनसंख्या में वृद्धि हो रही है औरजिस अनुपात में जनसंख्या में वृद्धि हो रही है उस अनुपात में रोजगार के अवसरों में वृद्धि नहीं हो रही है । इसलिए बेरोजगारी में निरंतर वृद्धि हो रही है।

5. भूमि से अत्यधिक लगाव– गाँव में जन्मा व्यक्ति अनेक कष्टप्रद यातनाओं को सहना पसंद करता है पर गॉव किसी भी कीमत पर सामान्यतः नहीं छोड़ना चाहता है । कृषि से कुछ उत्पन्न हो या न हो, उसे गॉव में कोई काम मिले अथवा न मिले पर वह अपनी जन्म–भूमि को छोड़ना नहीं चाहता । इससे ग्रामीण अंचलों में बेरोजगारी की समस्या में वृद्धि हुई है ।

6. प्रगति की धीमी गति – कृषि पर जितना ध्यानसरकार को देना चाहिए उसने नहीं दिया है । वैज्ञानिक कृषि व्यवसाय का विकास यहॉ न के समान हुआ है । सिंचाई, बीज, खाद, आधुनिक उपकरण आदि कृषि के लिए आज अति आवश्यक है । ये केवल बड़े किसानों के पास उपलब्ध हैं । इसी कारण संपूर्ण खेतिहर समुदाय की प्रगति नहीं हो पायी है । खेती में पिछड़े होने के कारण गॉव में रोजगार के अवसरों का भी विकास नहीं हुआ है । इसीलिए गॉव में बेरोजगारी की गंभीर समस्या बन गयी है ।

7. ग्रामीण कुटीर उद्योग धंधों का पतन – इन उद्योगों का पतन होने से वे कृषि श्रमिक भी बेकार हो गए जो अपने अतिरिक्त समय में इन कार्यों से कुछ अतिरिक्त आय कर लेते थे । गॉव में कुछ ऐसे भ्ज्ञी परिवार थे जो संपूर्ण वर्ष इन्हीं उद्योगों के माध्यम से अपनी जीविका अर्जित करते थे ।

8. विवेकहीन यंत्रीकरण का समय – कृषि व्यवसाय में मशीनों का प्रयोग प्रगतिशील और आधुनिक खेती का परिचाश्क है किन्तु इसका प्रयोग सोच समझ कर न किया जाए तो यह असंख्य ग्रामीण श्रमिकों को बेरोजगार बना देती है । हमारे देश में ऐसा ही हो रहा है ।

9. खेतों का विभाजन – परम्परात्मक संयुक्त परिवार जो कृषि व्यवसाय में लगा था– वह अब वैयक्तिक बंटवारे के कारण समाप्त होता जा रहा है । खेत अब परिवार के व्यक्तियों में टुकड़ों टुकड़ों में विभाजित होते जा रहे हैं । इसलिए अब खेती से संबंधित काम में भी कमी आ गयी है । ये व्यक्तियों को

अधिक से अधिक बेकार बना रही है । छोटे छोटे खेतों में अन्न भी कम होता है । खेत में जुड़े काम भी समाप्त हो रहे हैं ।

10. दोषपूर्ण शिक्षा पद्धति – भारत की वर्तमान शिक्षा पद्धति ग्रंामीण युवकों को खेती से जोड़ने की अपेक्षा इनहें उससे पृथक कर रही है । शिक्षित ग्रामीण युवक कृषि का कार्य नहीं करना चाहता है । इसके साथ ही साथ उसे नगर में भी काम नहीं मिल पाता है । इससे भी ग्रामीण क्षेत्रों में बेकारी बढ़ रही है । आवश्यकता है इन्हें कृषि कार्य में प्रशिक्षण देने की जिससे ये गॉव मे रहकर अपने ही खेतों पर रुचि लेकर काम कर सकें ।

11. रोजगार के अवसरों का अभाव – सरकार का यह दायित्व है कि वह ग्रामीण अंचलों में अधिक से अधिक रोजगार के अवसर उत्पन्न करे जिससे वहॉ के व्यक्तियों को खेती के अतिरिक्त भी रोजगार प्राप्त हो सके ।

ग्रामीण बेरोजगारी के निराकरण के उपाय ;म्तंकपबंजपवद व िटपससंहम न्दमउचसवलउमदजद्ध

उपरोक्त तथ्य ग्रामीण बेरोजगारी का एक भयानक चित्र हमारे सम्मुख प्रस्तुत करते है जिसे निम्नलिखित उपायों के द्वारा दूर किया जा सकता है –

1. ग्रामीण क्षेत्रों में ऐसे रोजगार के अवसरों को विकसित करने की आवश्यकता है जिससे ग्रामीण व्यक्तियों को खली समय में काम मिल सके । इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए कुटीर उद्योग धंधों को बड़े पैमाने पर विकसित किया जाना चाहिए ।

2. व्यर्थ में पड़ी बंजर, ऊसर भूमि अथवा ऐसी भूमि जिसे कोई व्यक्ति प्रयोग नहीं कर रहा है, ऐसी भूमि को भूमिहीन श्रमिकों के मध्य वितरित किया जाए । इसके साथ ही साथ इन्हें कृषि संबंधी सभी प्रकार की सुविधाऍ दी जाए जिससे इस भूमि को उपजाऊ बनाया जा सके और अधिक से अधिक व्यक्तियों को इन खेतों पर काम के लिए लगाया जा सके ।

3. गॉव की बढ़ती हुई जनसंख्या पर नियंत्रण करने की आवश्यकता है । परिवार नियोजन के कार्यक्रम को जन जन में पहुॅचाना होगा । ग्रामीणों को इसे मनोवैज्ञानिक ढंग से समझाना होगा ।

4. विकास योजनाओं को प्रभावी बनाया जाए – ग्रामीण क्षेत्रों में विभिन्न प्रकार की विकास योजनाऍ चल रही हैं । इसे इस रूप में संगठित करना चाहिए कि यह गॉव में रोजगार के नये आयामों को विकसित कर सके जैसे लघु उद्योग, सड़क निर्माण, नहर निर्माण आदि ।

5. कृषि संबंध कार्यों में सुधार करने की आवश्यकता है – सामान्य और निर्धन किसान को सिंचाई, खाद, वैज्ञानिक उपकरणों की सुविधाओं आदि को देने का प्रबंध किया जाए जिससे कृषि व्यवसाय में काफी उन्नति हो सके । इस प्रकार की योजनाओं से गॉव भी समृद्ध होंगे और बेरोजगारी की समस्या में भी कमी आयेगी ।

6. रोजगार के नये आकर्षण उत्पन्न किये जाए – गॉव में ऐसे नये रोजगार स्थापित किये जाये जो वहॉ के व्यक्तियों को वर्ष भर काम दे सके जैसे बड़े स्तर पर खादी उद्योग धंधों को विकसित किया जाए । चिकन का काम, कम्बल, दरी और कालीन बनाने के प्रशिक्षण केंद्र स्थापित किये जाये । ग्रामीण व्यक्तियों को विकसित कार्यों का प्रशिक्षण भी दिया जाये और साथ में उन्हें रोजगार भी दिया जाये ।

7. सहकारिता समितियों की स्थापनाएॅ की जाए – इन समितियों का यह दायित्व है कि ये जरूरतमंद व्यक्तियों को उनकी आवश्यकता के अनुरूप सहायता करें । ये अपना कारोबार सुचारू रूप से कर सके । नये कारोबार की स्थापना कर सके । धनाभाव के कारण कोई भी कारोबार बंद न हो सके, इस पर भी ध्यान रखना आवश्यक है ।

8. कृष्झि बाजारों का प्रबंध भी आवश्यक है । सीधे व सरल ग्रामीण व्यक्ति को महाजन सरलता से ठग लेता है । इन महाजनों के जाल में किसान न फॅसे इसके लिए आवश्यक है कि सरकार की ऐसी मंडियों की स्थापना करे जहॉ उसकी फसल का उचित मूल्य प्राप्त हो सके । इससे जहॉ किसान की आर्थिक स्थिति में परिवर्तन होगा कि वहीं उसे अधिक अन्न उपजाने की प्रेरणा भी प्राप्त होगी । इससे अधिक से अधिक व्यक्ति खेती के कार्य में रुचि लेने लगेंगे ।

सरकार द्वारा किए गए उपाय ;डमेंनतमे जांमद इल ळवअमतदउमदजद्ध

प्रथम पंचवर्षीय योजना में भूमिहीन श्रमिकों को बसाने के लिए दो करोड़ रुपये व्यय करने का निश्चय किया गया था । बाद में यह राशि 1.5 करोड़ रुपये कर दी गयी । योजना में 75 लाख व्यक्तियों को रोजगार दिलाने का लक्ष्य रखा गया किंतु 54 लाख व्यक्तियों को ही रोजगार प्राप्त हो सका । द्वितीय योजना के आरंभ में 53 लाख व्यक्ति बेरोजगार थे जिसके कि 1 करोड़ तक पहुॅचने का अनुमान था । इस योजना में 96 लाख व्यक्तियों को रोजगार दिलाने का लक्ष्य निर्धारित किया गया जिसमें 80 लाख गैर कृषि क्षेत्र में और 16 लाख कृषि क्षेत्र में था । इस योजना ने 65 लाख व्यक्तियों को रोजगार दिलाया । तृतीय योजना में 1 करोड़ 30 लाख व्यक्तियों को रोजगार प्राप्त हुआ । चतुर्थ योजना में बेकारी तथा अर्थ बेकारी के निराकरण के लिए 100 करोड़ की लागत से ग्रामीण निर्माण कार्यक्रम आरंभ किया गया । इस योजना में 1.9 करोड़ व्यक्तियों के लिए नये व्यवसाय उपलब्ध कराने की व्यवस्था की गई । पॉचवी योजना में रोजगार बढ़ाने के लिए भू–संरक्षण, क्षेत्रीय विकास, पशुपालन, दुग्ध व्यवसाय सड़कें तथा लघु कृषक विकास जैसी अनेक योजनाओं का कार्यक्रम बनाया गया । छठी योजना में रोजगार में वृद्धि के लिए ग्राम तथा कृषि विकास परियोजनाओं में लगभग 47 हजार करोड़ रुपये व्यय करने की व्यवस्था की गई । इस अवधि में तीन करोड़ व्यक्तियों को रोजगार प्राप्त हो सकेगा । सरकार ने ग्रामीण बेरोजगारी के समाधान के लिए अनेक प्रकार की योजनाओं को भी प्राथमिकता दी है जैसे ग्राम निर्माण प्रोग्राम, समन्वित खुश्क भूमि विकास, कृषि सेवा केंद्र, राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार कार्यक्रम ।

ग्रामीण बेकारी
(RURAL UNEMLOYMENT)

राष्ट्र की उन्नति के लिए जनस्वास्थ्य का विषय बहुत ही आवश्यक है । राष्ट्र के व्यक्तियों की शक्ति तथा देश की उत्पादन क्षमता का मापदंड स्वास्थ्य होता है । राष्ट्र के उद्योगों तथा कृषि की उत्पादन की क्षमता जनसंख्या पर निर्भर करती है। केवल रोगों की अनुपस्थिति का ही नाम स्वास्थ्य नहीं हैं । यह व्यक्ति के प्राकृतिक तथा सामाजिक बाह्य वातावरण का समन्वय है और समस्त प्राणि मात्र के शारीरिक तथा मानसिक सामर्थ्य के अनुरूप विकास की स्थिति है । अतएव स्वस्थ्य में चिकित्सा संबंधी तत्वों के साथ साथ, सामाजिक, आर्थिक तथा शैक्षिक तत्व भी निहित होते है । स्वास्थ्य सर्वेक्षण तथा विकास समिति (1946) ने ठीक ही कहा है कि ''स्वास्थ्य शब्द व्यक्ति मे केवल रोगों के अभाव का ही बोधक नहीं है । यह प्राकृतिक तथा सामाजिक वातावरण संबंधी शरीर तथा मस्तिष्क के समान विकास की स्थिति का सूचक है, जिसके द्वारा वह जीवन का पूर्ण आनंद प्राप्त करने तथा सर्वाधिक उत्पादन क्षमता की स्थिति पाने योग्य बनता है ।''

हम इक्कीसवी सदी में इस विश्वास के साथ प्रवेश करने जा रहे है कि भारत की गिनती विश्व के आधुनिक एवं सम्पन्न देशों में होगी । सरकार यह भी नीति अपना रही है कि जिसके तहत वह स्वास्थ्य, शिक्षा व भोजन पर किये जाने वाले खर्च में कटौती करेगी । यह कैसा तर्क है? इन नीतियों ने यह स्पष्ट संकेत दे दिया है कि अगली सदी का भारत सबसे ज्यादा बीमार और कुपोषित लोगों का देश होगा । आज नेशनल सेम्पल सर्वे के आंकड़े यह दर्शाते है कि गॉवों में कर्जदार बन जाने का, दहेज के बाद सबसे व्यापक कारण है इलाज पर खर्च ।

स्वास्थ्य के संबंध में सरकारी नीतियॉ तीन दिशाओं में अग्रसर हो रही हैं –

1. स्वास्थ्य के क्षेत्र में निजी पूंजी को बुंलावा देना,
2. सरकारी सेवाओं के लिए फीस मांगना ।
3. ग्रामीण स्वास्थ्य संस्थाओं को या सरकारी संस्थाओं को स्वैच्छिक संस्थाओं के हवाले कर देना ।

सरकार की यह तीनों नीतियॉ संविधान में किये गये ''सबकों मुफ्त स्वास्थ्य सेवा उपलब्ध करवाने'' के वायदे के विरुद्ध है ।

1989–90 व 1992–93 के बीच केंद्र सरकार का स्वास्थ्य के मद पर किया जाने वाला खर्चा 5 से 10 प्रतिशत कम हुआ । स्वतंत्र भारत के इतिहास में यह घटित हुआ । हांलाकि 1992–93 के बाद 1995–96 तक यह खर्च 302 करोड़ रुपये से बढ़कर 670 करोड़ रुपये हो गया । स्वास्थ्य संबंधी चीजों में अत्यधिक दामों में वृद्धि होने से इसमें वास्तविक बढ़ोतरी नहीं हुई । 1990–91 व 1994–95 के मध्य 15 में से 10 बड़े राज्यों के स्वास्थ्य पर खर्चे में कटौती करनी पड़ी । इस कटौती का प्रभाव स्वास्थ्य सेवाओं के विस्तार पर पड़ना स्वाभाविक था ।

सरकारी क्षेत्र के सिकुड़ने से निजी क्षेत्रों में मेडिकल कॉलेजों को प्रोत्साहन मिला । निजी क्षेत्र के व्यवसायी प्रवृति के व्यक्तियों ने प्राइवेट नर्सिंग होम खोलने आरंभ कर दिये । यह नगर और महानगारों में इतने खुल गये है कि स्वास्थ्य सेवा के नाम पर बीमारों का खुले आम शोषण किया जा रहा हे । इसका मुख्य कारण है सरकारी अस्पतालों व मेडिकल कॉलेजों की जर्जर दशा । सरकारी डाक्टरों ने अपनी दुकान चला रखी है । ये मेडिकल कॉलेज या सरकारी अस्पतालों में नाम मात्र को काम करते है और नर्सिंग होम में अधिक कार्य करते है । इन्हें ये अस्पताल बेशुमार धन देते हैं । ये धन गरीब, मध्य परिवार की जेबों को काट कर दिया जाता है । धनाढ़य वर्ग पर मंहगे इलाज का कोई फर्क नहीं पड़ता किंतु निर्धन तो सब कुछ बेचकर इलाज कराता है । यह सत्य देश की जर्जर सरकारी चिकित्सा की दासता है ।

विश्व स्वास्थ्य संगठन की 1995 की विश्व स्वास्थ्य रपट एक नया पड़ाव है जिसमें बीमारी के अंतर्राष्ट्रीय वर्गीकरण में एक नयी बीमारी की श्रेणी जेड 59.5 को शामिल किया गया है । जेड 59.5 की पूरा नाम है ''अत्यधिक गरीबी'' जो रिपोर्ट के अनुसार बढ़ रहीं है । जेड 59.5 के बढ़ने का अर्थ है उन सभी बीमारियों का बढ़ना जिनका संबंध गरीबी से होता है । अनुमान है कि भारत में 5 साल से कम उम्र के बच्चों में हर तीन में से दो कुपोष्झित है । गिनती में यह संख्या पूरे सात करोड़ बच्चों की है अर्थात् विश्व के 17 करोड़ कुपोषित बचचों में से 40 प्रतिशत बच्चे हिन्दुस्तानी हैं । आधे पेट भरकर जीने वाले लोगों को संक्रमण व संक्रामक बीमारयिों का खतरा बढ़ गया है जिनमें शामिल है– मलेरिया, टाइफाइड, हिपेटाइटिस व पेचिस ।

खाद्यान्नों के दाम आसमान छू रहे हैं । मंहगाई ने निर्धन और मध्यम परिवारों के व्यक्तियों की कमर तोड़ रहीं है । स्थिति तो यह हो गई है कि लोग रोटी और दाल बमुश्किल खा रहे हैं । 10 रुपये किलों गेहूँ हो गया और 25 रुपये से लेकर 35 रुपये प्रतिकिलों दाल हो गई । दो जून के रोटी के लाले पड़ गये हैं। कैसे भारत का व्यक्ति स्वस्थ्य रह सकता है । वह भूखा भी मरेगा और बीमारी से मरेगा । स्वतंत्र देश में भूखे रहने और भूख से मरने की पूरी छूट है ।

खाद्यान्नों के दामों में वृद्धि का असर गर्भवती महिलाओं पर अत्यधिक पड़ा है । 70 प्रतिशत आज भी खून की कमी से पीड़ित है । एनिमिक मरीज है । उसे दो समय काभर पेट भोजन भी नहीं मिल पाता है । पौष्टिक पदार्थों की बात तो सोचना दूर रहा । राष्ट्रीय पारिवारिक स्वास्थ्य सर्वे के अनुसार 5 साल तक जिन्दा रहने वाले बच्चों में से 52 प्रतिशत बच्चे बौने रह जाते हैं । 53 प्रतिशत का बजन कम रहता है और 21 से 29 प्रतिशत भयंकर कुपोषण के शिकार होते हैं । 13 में से 1 बच्चे की मृत्यु 1 वर्ष के पहले ही हो जाती हे । लड़कों की अपेक्षा एक से पॉच वर्ष की उम्र में मरने वाली लड़कियों की संख्या 43 प्रतिशत अधिक है । नवजात शिशु मौतों में से आधे बच्चों की मृत्यु जन्म से पहले सप्ताह के अंदर हो जाती है । इन मौतों का सीधा संबंध मातृ स्वास्थ्य व पोषण के स्तर से है ।

स्वास्थ्य संबंधी महत्वपूर्ण लेखा जोखा

1. 9 हजार छोटे बच्चे हर दिन मरते हैं यह संख्या लातूर के भूकम्प में मरने वालों की कुल संख्या से अधिक हे । विश्व में बच्चों की एक तिहाई मौतों के लिए भारत जिम्मेदार है ।
2. 13 करोड़ भारतीय नागरिकों को किसी भी प्रकार की स्वास्थ्य सेवाएँ उपलब्ध नहीं है ।
3. 18.5 करोड़ लोगों को पीने का पीन उपलब्ध नहीं है । 64.5 करोड़ लोगों को शोचालय की सुविधा उपलब्ध नहीं है ।
4. 5 वर्ष की उम्र से कम 7 करोड़ भारतीय बच्चे कुपोषण के शिकार है । अर्थात पूरे विश्व के कुपोषित बच्चों में भारतीय बच्चों का अनुपात 40 प्रतिशत है ।
5. हर साल पैदा होने वाले 260 लाख बच्चों में से 23 लाख अपने पहले जन्म दिन से पहले ही मर जाते हैं । इनके अलावा 12 लाख बच्चे 5 वर्ष की उम्र के पहले मरते है ।
6. हालांकि सरकार दावा करती है कि 80 प्रतिशत गॉवों में स्वच्छ पीने योग्य पानी उपलब्ध है, 10 लाख बच्चे गंदे पानी के कारण डायरिया हो जाने पर मौत का शिकार हो जाते है ।
7. सरकार का दावा हे कि 90 प्रतिशत औरतों और बच्चों को प्रतिरक्षक टीक लगते है फिर भी 2 लाख नवजात शिशुओं की मौत टिटनेस के कारण होती है ।
8. पॉच औरतों में से चार गर्भावस्था के दौरान फीके खून की बीमारी से पीड़ित होती है यह दर विश्व में सबसे ऊँची है ।
9. 3 में से सिर्फ 1 औरत को प्रसूति के दौरान प्रशिक्षित कार्यकर्त्ताओं की सेवाएँ मिल पाती है । इसके अतिरिक्त 12 लाख औरते हर साल प्रसूति के दौरान मौत का शिकार होते है ।
10. टी बी से हर साल 5 लाख लोग मरते हैं और हर साल टी बी के 10 लाख नये केस होते हैं कुल मिलाकर 140 लाख लोगों को टी बी की बीमारी है ।
11. हर साल 20 लाख से भी ज्यादा लोगों को मलेरिया है ।

उपर्युक्त आंकड़े जो देश में व्याप्त सभी बीमारियों के नहीं हैं । जिनके कारण यहॉ लाखों की संख्या में प्रत्येक वर्ष मौते होती है ं। यह बोलते आंकड़े इस सत्य और तथ्य के परिचायक है कि भारत में स्वास्थ्य संबंधी सरकार की दलीलें कितनी खोखली हैं । और जो सरकार धन सरकारी अस्पतालों के लिए आबंटित करती हैं वे सब भ्रष्टतंत्र निगल लेता है । सरकारी सुविधाएँ, जो बहुत कम हैं, मरीज तक पहुॅचती नहीं हैं । इस नियत ने एक बीमार समाज की स्थापना की । भावी पीढ़ी को स्वास्थ्य बनाने वाले बीमार मानसिकता के हैं । भ्रष्टतंत्र के भागीदार है । ये सब जनता के मौत के जिम्मेदार हैं जो उचित चिकित्सा के अभाव में दम तोड़ते है ।

सरकार ने 1994 में नई औषधि नीति बनाई और 1995 में नई औषधि कीमत नियंत्रण आदेश जारी किया । नई नीतियों के तहत सरकार ने उत्पादन के कीमत पर से नियंत्रणों को हटाकर पूंजीपतियों को ढील दी । ऐसी औषधियों की संख्या बहुत कम कर दी गयी जिनकी कीमत सरकार तय करती है । इस तरह

औषधि निर्माताओं को खुली छूट मुनाफा कमाने के लिए दी गई । इस नई औषधि नीति का परिणाम यह हुआ कि 1995 के औषधि कीमत नियंत्रण आदेश के प्रसारित होते ही कई जरूरी दवाओं के दाम बेतहाशा बढ़ा दिए ।

यह कितना विरोधाभास है कि भारत जैसे गरीब देश में आवश्यक और जीवनदायनी दवाओं के दाम कम होने चाहिए जिससे निर्धन से निर्धन व्यक्ति दवा खरीद सके पर इस देश में ठीक इसके उल्टा हो रहा है । दवाओं के अभाव में लाखों व्यक्ति मौत की नींद सो रहे हैं । सरकार पर इसका कोई प्रभाव नहीं है । हॉ यदि किसी विशेष बड़े आदमी की अस्पताल में मृत्यु हो जाए तो जॉच कमेटी बैठा दी जाती हे । निर्धन दवाओं के अभाव में मरता है तो कोई शोर और हंगामा नहीं होता पर कोई बड़ा व्यक्ति अस्पताल मे ंमर जाए तो सर पर आसमान उठा लेते हैं । निर्धन की मौत पर कौन ऑसू बहाए । 'एक विश्व, एक आशा' विषयवस्तु को 1 दिसम्बर 1996 को विश्व एड्स दिवस के लिए अपराया गया जिसमें एचआईवी के फैलने को रोकने के लिए विभिनन समूहों ने मिलकर संकल्प लिया ।

भारत के विभिन्न प्रांतों में जन्म दर (Birth Rate in different status of India)

यदि भारत के विभिन्न प्रांतों की जन्मदर को देखा जाए तो स्पष्ट होगा कि इसमें बहुत अधिक विभिन्नता विद्यमान है। जहॉ कुछ प्रांतों जैसे– असम, गुजरात, मध्यप्रदेश, पंजाब, राजस्थान, पश्चिमी बंगाल व उत्तर प्रदेश में जन्म दर अधिक हैं, वहीं तमिलनाडू, जम्मू एवं काश्मीर व केरल में जन्म दर कम है । नीचे तालिका में इसी तथ्य को स्पष्ट करने के लिए एसआरएस 1995 पर आधारित अंतिम ऑकड़ों के अनुसार विभिन्न प्रांतों की जन्म दर तथा जनसंख्या वृद्धि दर को प्रदर्शित किया गया है –

विभिन्न प्रांतों में जन्म दर एवं जनसंख्या वृद्धि दर, 1995

प्रांत	जन्म दर	मृत्यु दर	वृद्धि दर
आंध्र प्रदेश	24.0	8.3	15.7
असम	29.3	9.6	19.7
बिहार	32.1	10.5	21.6
गुजरात	26.7	7.6	19.1
केरल	17.7	6.0	11.7
मध्य प्रदेश	33.0	11.0	22.0
तमिलनाडू	20.2	7.9	12.3
महाराष्ट्र	24.5	7.4	17.1
कर्नाटक	24.2	7.6	16.6
उड़ीसा	27.7	10.8	16.9
पंजाब	24.7	7.3	17.4

राजस्थान	33.2	9.1	24.1
उत्तर प्रदेश	34.7	10.4	24.3
पं. बंगाल	23.6	7.7	15.7
संपूर्ण भारत	28.3	9.0	19.3

नोटः– जन्म दर तथा मृत्यु दर प्रति एक हजार जनसंख्या के रूप में । झारखण्ड, छतीसगढ़ तथा उत्तरांचल राज्यों के आंकड़े बिहार, मध्यप्रदेश तथा उत्तर प्रदेश में शामिल हैं ।

उपर्युक्त तालिका से स्पष्ट है कि जहॉ कुछ राज्यों में जन्म दर औसत दर से भी अधिक है वहीं कुछ राज्यों में कम है । यदि क्षेत्रीय दृष्टि से भारत में जन्म दर को देखा जाए तो उसमें भी पर्याप्त भिन्नता देखने को मिलती है । सबसे अधिक जन्म दर उत्तरी क्षेत्र में है जिसमें उत्तर प्रदेश पंजाब और राज्स्थान प्रांत को सम्मिलित किया गया है बकि सबसे कम जन्म दर दक्षिणी क्षेत्र की है जिसमें आंध्र प्रदेश, तमिलनाडू, केरल व कर्नाटक प्रांत सम्मिलित हैं ।

अस्वस्थ होने के कारण ;त्मेंवदे वित पसस ीमंसजीद्ध

भारत में अस्वस्थता के अनेक कारण हो सकते हैं किंतु मुख्य कारण निम्नलिखित हैं –

1. अपर्याप्त और पोषणहीन भोजन – व्यक्ति तभी स्वस्थ रह सकता है जब उसके शरीर की आवश्यकतानुसार उसे पोषक तत्व मिले । एक स्वस्थ व्यक्ति के लिए कम से कम 3000 केलीरीज खाद्य पदार्थ प्राप्त होना चाहिए किंतु भारत के सामान्य व्यक्ति को 1500 से 1700 के मध्य ही कैलोरी प्राप्त होती है । इसलिए उसके शरीर में पर्याप्त प्रोटीन, कार्बोहाइड्रेट, चर्बी और अन्य विटामिन तत्वों की कमी पायी जाती हैं । अपर्याप्त और पौष्टिक भोजन न मिलने के कारण आम भारतीय अस्वस्थ रहता है ।

2. निर्धनता – यहॉ के व्यक्तियों को दो समय का भोजन बहुत कठिनाई से प्राप्त होता है फिर वह स्वास्थ्य वर्धक चीजों का प्रयोग कैसे कर सकता है । निर्धनता स्वय हजार रोगों का एक रोग है । जो उसे शारीरिक और मानसिक रूप से बीमार बनाए रखती है ।

3. अशिक्षा – ग्रामीण समाज निर्धनता, अशिक्षा, भुखमरी जैसे अनेक रोगों से ग्रस्त है । अशिक्षा ने व्यक्ति को कूप मंडूक बना रखा है । अशिक्षित व्यक्ति न रोग को गंभीरता से समझ पाता है और न उसका उचित उपचार ही करा पाता है । अस्तु वह बीमार और अस्वस्थ बना रहता है ।

4. आवास–समस्या – करोड़ों ग्रामीण परिवार टूटी झोपड़ी, सीले हुए कच्चे मकान में रहता है और करोड़ो छप्पर डालकर रहते हैं । एक कच्चे मकान के एक छोटे कमरे में 10–12 व्यक्ति तक साथ साथ रहते हैं । इसका स्वास्थ्य पर प्रभाव पड़ता है । इनके घरों में न रोशनी आती है और न रोशनदान ही होते हैं । यह सभी चीजें स्वास्थ्य के लिए आवश्यक हैं । इनके अभाव में व्यक्ति अस्वस्थ और बीमार रहता है ।

5. धार्मिक अंधविश्वास – भारत में धर्म ने अनेक प्रकार के अंधविश्वासों को भी जन्म दिया है । अशिक्षित ग्रामीण समाज कितना भी बीमार रहने पर अण्डा मांस मछली जो बहुत ही ताकत की चीजें है नहीं खाते हैं क्योंकि इनके सेवन से उनका धर्म नष्ट होता है ।

6. सामाजिक कुप्रथाएँ – कुप्रथाओं से घिरा और जकड़ा ग्रामीण समाज अनेक बीमारियों का दास है । बालविवाह, अनमेल विवाह, पर्दाप्रथा आदि ऐसी कुप्रथाएँ ग्रामीण समाज में प्रचलित हैं जो अस्वस्थता का कारण है । छोटी आयु में विवाह और माता पिता बनना, बीमारियों को निंमंत्रित करना है । पर्दा प्रथा क्षय रोग का कारण बनती है और अनमेल विवाह मानसिक रोगों को जन्म देता है वहीं शारीरिक रोगों को भी उत्पन्न कर देता है ।

7. स्वच्छ जल और सफाई का अभाव – ग्रामीण समाज के भाग्य में स्वच्छ जल और सफाई दोनों नहीं है । कुएँ और तालाबों का सड़ता हुआ जल गॉव वालों को पीने के लिए मिलता है । तालाब का दूषित जल जिसमें नहाया भी जाता है, कपड़े भी धोये जाते है और पशुओं का मल मूत्र भी उसमें बहता रहता है । और इस जल का प्रयोग ग्रामीण करता है । कुएं तालाब नदियों का जल शायद ही कभी साफ किया जाता हो और यही कारण है कि ग्रामीण बीमार रहता है ।

8. नशीली चीजों की आदत – गांव में छोटी आयु से ही बालक बीड़ी, हुक्का, ताड़ी और कच्ची शराब पीने लगता है । कस्बों के संपर्क में आकर अफीम, गांजा, चरस आदि भी पीने लगते हैं । ये सभी चीजें ग्रामीण व्यक्ति के स्वास्थ्य को केवल नष्ट ही नहीं करती बल्कि उन्हें दुर्बल, शक्तिहीन बना देते हैं ।

9. मिलावट का दौर – शहर की गंदगी और धनी बनने की प्रवृति गांव में ाी पहुॅच गयी है ।आज की संस्कृति में आदमी आदमी को मारकर धनी बनना चाहता हे । तेल औ।र घी में मिलावट मसालों और चाय में मिलावट, दू्ध में मिलावट से व्यक्ति अंधा भी होता है और पक्षाघात का शिकार भी और दिल का मरीज भी । इनसे पेट की बीमारियॉ अत्यधिक होती हैं ।

10. स्वास्थ्य केंद्र और सेवा संस्थाओं का अभाव 7 ग्रामीण समाज में अस्पताल, चिकित्सक कम्पाउंडर नर्स सभी की कमी है । जहॉ अस्पताल हे वहॉ डाक्टर नहीं है और जहॉ डाक्टर है वहॉ दववा नही है । दुख है कि जहॉ भारत में 75 प्रतिशत जनसंख्या निवास करती है वहॉ चिकित्सा संबंधी सुविधाएॅ न के बराबर है ।

11. मेडीकल कॉलेजों की जर्जर अवस्था – स्वतंत्रता के पश्चात यह आशा की जाती थी कि देश की निर्धन जनता को इलाज सरकारी मेडीकल कॉलेजों में प्राप्त होगा पर जैसे जैसे समय व्यतीत होता गया चिकित के सरकारी केंद्रों की दशा जर्जर होती गयी । यहॉ निर्धनों को दवाएॅ उपलब्ध नहीं होती । मरीजों के साथ डाक्टरों का रूखा और उपेक्षापूर्ण व्यवहार में इतनी वृद्धि हो गयी है कि सामान्य मरीज वहॉ जाना पसंद नहीं करता परिणामस्वरूप बीमारी बढ़ रही हे और इलाज की सरकारी सुविधाएॅ शून्य सी हो गयी है । प्रश्न

हे अस्वस्थ्य व्यक्ति स्वस्थ्य कैसे हो सकता है? वास्तविकता यह है कि स्वस्थ्य व्यक्ति चिकित्सा के अभाव में बीमार होता जा रहा है ·

12. नकली और जाली दवाओं की भरमार – भौतिकबादी और भोगवादी संस्कृति में व्यक्ति राक्षस हो गया हे । वह रातों रात धनाढय होना चाहता है । धोखा धड़ी की नियत ने मनुष्यता को ही निगल लिया है । वह लाशों पर महल बनाना चाहता है । यह दुर्भाग्य की बात हे कि यहॉ का व्यक्ति केपसूल में हल्दी, मैंदा या और कोई पाउडर मिलाकर बाजार में बेचता है । इन्हें बीमार व्यक्ति खाकर स्वस्थ्य तो नहीं होता पर पहले से कही अधिक अस्वस्थ्य हो जाता है । इसी तरह बड़ी– बड़ी औषधि कम्पनियों की प्रसिद्ध दवाऐं व सिरप को नकली रूप में बेचा जाता है । इन दवाओं पर असली कम्पनी की मोहर लगी होती हैं । दवाओं का यह काला धन्धा संपूर्ण समाज को बीमार बना रहा हे ।

13. निर्धनों में निर्धन – इक्कीसवी सदी में प्रवेश करने वाला भारत विकास की डुग्गी पीट रहा है । देश में विदेशी कम्पनियों का जाल बिछा रहा हे पर इस देश में 35 से 45 प्रतिशत तक लोग गरीबी की रेखा से नीचे है । इन्हें दो समय का भोजन भी नहीं मिलता है । पौष्टिक भोजन तो इनके जीवन में है ही नहीं । यह जन्यम से ही अस्वस्थ्य होते है । इन्हें विरासत में मिलती है बीमारी । इन्हें टीबी होना कोई आश्चर्य की बात नहीं लगती । ये मलिन बस्तियों में रहते हैं जहॉ इनके चारों और बीमारियों का साम्राज्य रहता है । गर्भवती महिलाओं की दशा तो और ीाी दयनीय है, देश की 70 प्रतिशत गर्भवती महिलाओं में खून की कमी है, वास्तव में गरीबी सबसे बड़ी बीमारी है । यह अस्वस्थता का सबसे बड़ा कारण है।

14. बीमारियों है तो दवायें नहीं और दवायें है तो उपलब्ध नहीं – यह देश की विडम्बना है कि यहॉ असंख्य प्रकार ी बीमारियॉ उत्पन्न होती रहती है । मरीज और डाक्टर को यही ज्ञात नहीं हो पाता कि व्यक्ति को बीमारी क्या है, कौन सी दवा दी जाए । परिणामस्वरूप बीमारी तो दूर नहीं होती पर व्यक्ति खाट से लग जाता है ।

15. प्रदूषणः भयावह स्थिति – महानगरों में अस्वस्थता का सबसे बड़ा कारण बढ़ता हुआ प्रदूषण है । यहॉ न व्यक्ति को स्वच्छ पानी, और न स्वच्छ वायु मिलती है । लाखों की संख्या में यहॉ गाडियॉ चलती है । हमें स्वच्छ वायु के स्थान पर मिलता है विषैला काला धुँआ, पीने का गंदे से गंदा पानी, कान के परदे फाड़ने वाली गाडियों की आवाजें और मिलता है एक बेहद शोर भरा वातावरण । इन महानगरों में स्थायी रूप से पाये जाते हैं पेट के रोगी, टीबी के मरीज, दमें के मरीज, दुर्बल स्नायु के रोगी आदि । इन महानगरों में व्यक्ति को अस्वस्थता सौगात में मिली है । सरकार प्रदूशण को समाप्त करने हेतु जाने कितनी योजनायें चला रहीं है पर व्यक्ति अपने स्वार्थ के लिए प्रकृति का दोहन कर रहा है और सरकार के किसी भी कानून को मानने के लिए तैयार नहीं है । बढ़ता हुआ प्रदूषण एक अस्वस्थ्य बीमार समाज को स्थापित कर रहा है जहॉ व्यक्ति दम साधे किसी तरह जीवित है ।

अस्वस्थता और बीमारियों के दुष्परिणाम (Consequences of ill-health and Diseases)

भारत नौ सौ वर्ष तक गुलाम रहा है । इस देश पर लंबे काल तक छोटे छोटे राजाओं, जमीदारों, तालुकेदारों का शासन रहा है । सामंतवादी और साम्राज्यवादी व्यवस्था का एक मात्र लक्ष्य जनता का शोषण करना था । शताब्दियों तक इस निर्धन देश का इस वर्ग ने मनचाहे रूप में शोषण किया । सामंतवादियों ने देश के विकास और प्रगति के लिए जो कुछ किया वह महज अपने स्वार्थ की पूर्ति के लिए । निर्धन, श्रमिक, भूमिहीन रमिक का जी भर के शोषण किया । इन्हें इतना भी वेतन नहीं दिया जाता था कि ये दो समय का भोजन भी कर पाते । इनका जीवन गुलामों से भी खराब था । बंधुआ श्रमिकों ओर इनके परिवारों की दशा तो और भी दयनीय थी । ये गरीबी और ऋण मेंजन्म लेते थे और मृत्यु भी इसी के साथ होती थी । इस वर्ग के पास भोजन के लिए तो रुपये नहीं थे । ये स्वस्थ्य कैसे रह सकते थे । बीमारी इन्हें जन्म से मिलती है । इलाज कराने के लिए धन भी नहीं होता है । इसलिए गरीबी सबसे बड़ी बीमारी है जो व्यक्ति को अस्वस्थ्य और बीमार रखती है । बीमारों और कमजोर व्यक्तियों का समाज बीमार और अस्वस्थ्य समाज की स्थापना करता है । युगों युगो से यह समाज बीमार रहा हे और आज भी है । जिके दुष्परिणाम निम्नलिखित हैं –

1. बीमार स्नायु का व्यक्तित्व – एक बीमारसमाज से यह कैसे आशा की जा सकती है कि व्यक्ति स्वस्थ्य रह सकेगा । अधिकांश व्यतियों की सबसे बड़ी समस्या है कि वह अपने परिवार के दायित्व को किस प्रकार पूर्ण करें । उसकी आय आज इतनी भी नहीं है कि वह परिवार की आवश्यक आवश्यकताओं की पूर्ति कर सके । अपने बच्चों को अच्छी शिक्षा दे सके । बीमार व्यक्तियों का अच्छा इलाज करा सके । लड़की का विवाह ठीक ढंग से कर सके आदि समस्यायें उसके जीवन में स्थायी रूप से घर बनाकर बैठ गयी है । यह चिंतायें कुण्ठा और निराशा को जन्म देते है । ये व्यक्ति में तनाव उत्पन्न करते हैं । इससे अनेक भंयकर बीमारियों उत्पन्न होती है जैसे मानसिक रोग, पेट की बीमारियॉ, ब्लड प्रेशर, दिल की बीमारियॉ आदि । ये सभी व्यक्ति की क्षमताओं को नष्ट करती हैं ।

2. प्रदूषण का स्वास्थ्य पर प्रभाव – विश्व के देशों में आज सबसे गंभर समस्या प्रदूषण की है जो घुन की तरह व्यक्ति को खाये जा रहा है । व्यक्ति की संपूर्ण क्षमता, शक्ति, कार्यशक्ति में निरंतर ह्रास हो रहा हे । यह स्वास्थ्य पर अनेक तरह से प्रभाव डालते है । अनेक प्रकार के रोगों लोग कुष्ट, अंधापन लंगड़ापन आदि रोगों से ग्रसित है । नगर के निवासी बायुप्रदूषण से खॉसी, सिर दर्द, दमा, टीबी आदि बीमारियों के शिकार है । सल्फर डाईआक्साइड, नाइट्रोजन, आक्साइड, हाइड्रोजन सल्फाइड, ओजोन क्लोराइडस आदि फेफड़े में कैंसर जैसे गंभीर रोग को उत्पन्न करते हैं । अनेक प्रकार के एलर्जिक रोग होते है । इसी प्रकार जल प्रदूषण और ध्वनि प्रदूषण का प्रभाव व्यक्ति पर सीधा पड़ता है । ये सभी प्रकार के प्रदूषण व्यक्ति और समाज को अस्वस्थ्य बनाते हैं । एक बीमार समाज की रचना स्वयं मानव अपने स्वार्थ पूर्ति के लिए करता है । हम यह कह सकते है कि प्रदूषण से ग्रसित व्यक्ति और समाज अपनी क्षमताओं और शक्ति को नष्ट करता है । इससे मानव ऊर्जा का निरंतर क्षय होता है । इसका परिणाम है कि व्यक्ति कठिन कार्य करने में असमर्थ

रहता हे । लंबे समय तक वह कार्य नहीं कर पाता है । मिलों में उत्पादन गिरता हे और अस्पतालों में मरीजों की भीड़ लगती है ।

3. कार्यक्षमता और कुशलता में गिरावट – बीमारियों व्यक्ति की अस्वस्थ्ता का प्रतीक है । एक बीमार व्यक्ति अंदर ही अंदर घुलता जाता है । उसकी सारी शक्ति का निरंतर क्षय होता जाता है । बीमार व्यक्ति की निपुणता, कार्यक्षमता, योग्यता, शक्ति कार्य की दक्षता आदि में गिरावट आती है । देखा जाता है कि लंबी बीमारी से ग्रस्त मरीज बहुत दिनों तक नौकरी नहीं कर पाते है । वे लंबी छुट्टी पर रहते है । वेतन भी इन्हें कम मिलने लगता है । अंततः नौकरी से भी यह हाथ धो बैठते है । इस तरह बीमारियॉ व्यक्ति की कार्यकुशलता, क्षमता आदि को ही नष्ट नहीं करती है बल्कि उसे कहीं काभी नहीं रखती हैं ।

4. निम्न रहन सहन का स्तर – बीमार परिवार की अर्थव्यवस्था हमेशा घाटे में चलती हे जितने अधिक लोग परिवार में बीमार होंगे उस परिवार की आर्थिक दशा उतनी ही दयनीय और शोचनीय होती जाएगी । अनेक आवश्यकताओं की चीजों को त्याग दिया जाता है यहॉ तक कि बच्चों के लिए दूध घी भी नहीं खरीदा जाता है, महज बीमार व्यक्ति के इलाज के लिए । आय का अधिकांश भाग इलाज कराने में व्यय होता हे ं इस सबका परिणाम संपूर्ण परिवार को भुगतना पड़ता है । ऐसे बीमार परिवार के रहन सहन का स्तर निरंतर गिरता जाता हे ं आर्थिक सामाजिक स्थिति इतनी खराब हो जाती है कि समाज में इनका आदर और सम्मान भी नहीं होता हे । ये दया के पात्र हो जाते हैं । इस तरह के बीमारपरिवारों में आत्महतया की घटनाओं को देखा जा सकता है ।

5. वैयक्तिक विघटन और बेरोजगारी में वृद्धि – बेरोजगारी स्वयं में एक सामाजिक समस्या और रोग है । बढ़ती हुई जनसंख्या के अनुपात में रोजगार उपलब्ध नहीं है ।सरकारी आंकड़े कहते है कि शताबि के अंत में 18 करोड़ लोग बेरोजगार हो जायेगें । सत्य यह है कि इससे कहीं अधिक बेरोजगारों की संख्या है । वे असंख्य शिक्षित, अशिक्षित कुशल व अकुशल, इंजीनियर और डॉक्टर जो आज बेंरोजगार हैं वे कब तक अपनी इच्छाओं और आवश्यकताओं का दमन करते रहें । कब तक परिवार के उत्तरदायित्वों के भागीदार न बने । कब तक परिवार का बोझ बने रहे । एक स्वस्थ्य व्यक्ति अंतता बीमार बनता हे जिसके लिए यह समाज और सरकार पूर्णतया उत्तरदायी है । बीमार व्यक्ति को न तो कोई नौकरी देता है और न नैतिक प्रोत्साहन ही । इस प्रकार के समाज में वैयक्तिक विघटन की दर में निरंतर वृद्धि होती है ।

6. पारिवारिक विघटन– परिवार में यदि बीमारों की संख्या अधिक है तो ऐसे परिवारों में एक समय के पश्चात परिवार के सदस्यों में लड़ाई झगड़े, मनमुटाव, परिवार से अलग रहने की प्रवृति आदि में वृ0 होती हैं । परिवार के सदस्यों में इतना अधिक तनाव हो जाता है कि परस्पर बात तक नहीं करते हैं । पारिवारिक जीवन टूट जाता हे । पारिवारिक संबंध नहीं रहते हैं । यह सब तथ्य एक बीमार परिवार से उत्पन्न होते हैं जो पारिवारिक विघटन के लिए बहुत कुछ उत्तरदायी हैं ।

स्वास्थ्य संबंधी सरकारी प्रयास (Govt. Efforts to promote health)

सरकार सितम्बर 1978 के अलमा अता घोषणा पत्र के अनुरूप वर्ष 2000 तक सबके लिए स्वास्थ्य के लक्ष्य को पूरा करने के लिए वचनबद्ध हैं । इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए अनेक प्रकार की स्वास्थ्य योजनायें आरम्भ की गयी है । पांचवी पंचवर्षीय योजना में इस बात पर जोर दिया गया है कि नगर और ग्रामीण क्षेत्रों में स्वास्थ्य संबंधी जो विषमतायें हैं उन्हें दूर किया जायेगा । सातबी पंचवर्षीय योजना में स्ववास्थ्य संबंधी व्यापक कार्यक्रम बनाये गये जिससे अधिक से अधिक जनता को लाभ पहुॅच सके । सातवी पंचवर्षीय योजना के अंत तक पूरे देश में 54 केंद्रों के रूप में व्यापक ग्रामीण स्वास्थ्य की आधार संरचना स्थापित की गई । आठवीं पंचवर्षीय योजना 1992–97 में कर्मचारी, भवन सामग्री और उपस्कर उपलब्ध कराकर योजना को सुदृढ किया जा रहा है । चालू स्वास्थ्य कार्यक्रमों को मोटे तौर से केंद्रीय प्रयोजित योजना, और विशुद्ध केंद्रीय योजना के रूप में वर्गीकृत किया जा सकता है । केंद्रीय प्रयोजित योजना मुख्य रूप से विभिन्न प्रशिक्षण देने और इन कार्यक्रमों के माध्यम से सारे देश में राज्यों/केंद्र शासित प्रदेशों को उल्लिखित स्थिति का सामना करने के लिए सहायता दी जा रही है । आबंटित राशि का लगभग 70 प्रतिशत ग्रामीण क्षेत्रों में रोगों की रोकथाम और निवारण पर खर्च किया जाता है । विशुद्ध केंद्रीय प्रयोजित योजना द्वारा लगभग 30 संस्थाओं जिनमें स्वायत्त और सरकारी दोनों तरह के संस्थान शामिल है, जिनको आर्थिक सहायता दी जाती है ।

राष्ट्रीय स्वास्थ्य कार्यक्रम के तहत अनेक प्रकार की बीमारियों की रोकथाम के लिए विस्तृत कार्यक्रम को लागू किया गया है जैसे स्वतंत्रता प्राप्ति के समय देश में मलेरिया रोगी की संख्या 7–7 करोड़ थी किंतु 1958 में राष्ट्रीय मलेरिया रोग उन्मूलन कार्यक्रम के द्वारा इस पर नियंत्रण पा लिया गया । 1965 में मात्र मलेरिया रोगी की संख्या 1 लाख रह गयी । काला आजार बिहार और पश्चिम बंगाल के लिए एक गंभीर समस्यागन गयी थी । सितम्बर 1994 तक काला आजार के लगभग 20505 मामले दर्ज किये गये और 322 लोगों की मृत्यु इससे हो गयी । इस रोग पर नियंत्रण पाने के लिए केंद्र ने प्रभावित राज्यों के लिए कीटनाशक उपलब्ध करवाये और काला आजार प्रतिरोधी आयातित दवा और तकनीकी दिशा निर्देश भी दिये । सरकार के लिए अंधापन भी एक चुनौती बन गई थी । इस पर नियंत्रण पाने के लिए राष्ट्रीय अंधापन नियंत्रण कार्यक्रम 1976 में 100 प्रतिशत केंद्रीय प्रयोजित कार्यक्रम के रूप में आरंभ किया गया । इस रोग की रोकथाम के लिए सरकार ने अनेक महत्वपूर्ण कदम उठाये जैसे क्षेत्रीय नेत्र विज्ञान संस्थानों की स्थापना, मेडिकल कॉलेजों और जिला अस्पतालों का दर्जा बढ़ाना चलती फिरती नेत्र इकाईयों का विकास और विविध प्रकार से नेत्र सुविधाओं की व्यवस्था । सरकार का यह लक्ष्य है वर्ष 2000 तक अंधेपन का प्रतिशत 0.3 तक कर दिया जये । एक सर्वे से ज्ञात हुआ कि 80.1 प्रतिशत लोगों के अंधेपन का कारण मोतिया बिंद है जिसे सरलता से ठीक यिका जा सकता है । इस तरह अनेक जान लेवा रोगों पर नियंत्रण पाने के लिए सरकार अथाह प्रयास कर रही है जैसे कैंसर, कुष्ठ रोग, टीबी आदि । इन पर नियंत्रण पाने के लिए सरकार अरबों रुपये खर्च कर रहीं है क्योंकि ये रोग व्यक्ति के जीवन का हरण करते हैं । विभिन्न रोगों ी रोकथाम करने के लिए तथा भयंकर रोगों का विकास किस रूप में अनेक क्षेत्रों में फैलता है । इसे ज्ञात करने के लिए अनेक

चिकित्सा संबंधी अनुसंधान केंद्रों की स्थापना की गई है । राष्ट्रीय चिकित्सा विज्ञान अकादमी की स्थापना । इसका उद्देश्य चिकित्सा विज्ञानों के उत्थान को प्रोत्साहन देना है । इस प्रकार केंद्रीय स्वास्थ्य शिक्षा ब्यूरों की स्थापना की गई है । यह स्ववास्थ्य सेवा निदेशालय में स्वास्थ्य शिक्षा का शीर्ष संगठन है । यह संस्था विभिन्न प्रकार से अपने कार्यकर्ताओं और जनता को स्वास्थ्य संबंधी शिक्षा प्रदान करती है । इस ब्यूरों की स्वास्थ्य संबंधी कार्यों में महत्वपूर्ण भूमिका है । यह स्वास्थ्य संबंधी सामग्री को प्रकाशित कराकर जनता के मध्य वितरित करवाती है जिससे जनता को विभिन्न रोगों और स्वास्थ्य संबंधी बातों की जानकारी प्राप्त हो सके । विभिन्न राष्ट्रीय स्वास्थ्य कार्यक्रमों के लिए संचार और प्रचार माध्यमों से समर्थन उपलब्ध करवाना भी इसी ब्यूरों का कार्य है । यह स्वास्थ्य संबंधी जानकारी को आकाशवाणी और दूरदर्शन के माध्यम से प्रसारण करने की व्यवंस्था करता है ।

उपर्युक्त विवरण से यह ज्ञात होता है कि सरकार ग्रामीण और नगरीय क्षेत्रों में विभिन्न रोगों की रोकथाम हेतु विभिन्न प्रकार के स्वास्थ्य संबंधी कार्यक्रम को चला रही है । इन कार्यक्रमों से जहॉ वह रोगों पर नियंत्रण पाना चाहती है वहीं इसका लक्ष्य जनता का विभिन्न रोगों से परिचय कराना भी है जिससे वे अपने स्वास्थ्य की देखभाल उचित ढंग से कर सके और विभिन्न रोगों से अपनी रक्षा कर सके ।

आलोचना भारत का भ्रष्टतंत्र जनता को लाभ पहॅुचाने के बजाए उसको छल रहा है । करोड़ों रुपयों की औषधियों को अधिकारियों ने खा लिया । आयुर्वेदिक काण्ड इसका साक्षी है । विभिन्न चिकित्सा केंद्रों को चिकित्सा संबंधी जो करोड़ों रुपये दिये जाते हैं वे सरकार में बैठे बड़े अधिकारी बड़े पदाधिकारी डाक्टर और सरकार चलाने वालों के इशारे पर वे सरकारी आबंटित धन को निगल जाते हैं । सरकारी कागजों पर उसे नियोजित ढंग से व्यय के रूप में दिखाया जाता है । पर दुख इस बात का है कि रंगे हाथों पकड़े जाने पर भी इन्हें सजाये नही दी जाती । एक बार राजीव गांधी ने कानपूर में अपने भाषण में कहा था कि एक रुपये में मात्र 20 पैसे जनता तक पहॅुचते है बाकी सब खा लिया जाता है । भ्रष्टाचार का यह भंयकर रूप जनता को क्या सुविधायें देगा उसके हित और अधिकारों को यह भ्रष्टतंत्र हड़पे जा रहा है । आवश्यकता है जनता को अकजुट खड़े होकर इस भ्रष्टाचार के विरुद्ध निरंतर लड़ने की क्योंकि 50 वर्षों में भ्रष्टाचार की जड़े काफी गहरी हो गयी हैं ।

सरकार कुछ प्रयास भी करती है तो सरकारी चिकित्सालय इतने भ्रष्अ हो गये है कि वहॉ सुविधओं के नाम पर मरीजों की उपेक्षा की जाती है । उन्हें सलाह दी जाती है यहॉ कुछ नहीं है वे अपना इलाज नर्सिंग होम में करायें । ये उपभोक्ताओं के शोषण के केंद्र बन गये है और डाक्टरों के अनापशनाप आय के स्रोत बन गये हैं । लाख सरकार कानून बनाती रहे कि सरकारी डाक्टर प्राईवेट प्रेक्टिस नहीं करेंगे पर ठीक इसके विपरीत हो रहा है । इसलिए आवश्यकता है सरकारी अस्पतालों और मेडिकल कॉलेजों में सख्ती करने की पर शायद लोकतंत्र के शब्दकोश में सख्ती, अनुशासन, निष्ठा देश सेवउ का कोई स्थान नहीं रह गया है ।यह कितनी विचित्र बात है कि स्वतंत्र भारत में मुटठी भर भ्रष्ट व्यक्ति सम्पन्न और खुशहाल है और अधिकांश

व्यक्ति अभावों में जी रहा है । इन बेइमानों और माफियाओं के विरुद्ध एक जुट खड़े होने का समय आ गया अन्यथा यह समाज को मोहताज, पराश्रित और बीमार बनाकर शोषण करते रहेंगे । इस देश में शताब्दियों पूर्व से यह शोषण की नीति चली आ रहीं है । अंतर केवल स्वरूप का है जो स्वतंत्र भारत में हमें देखने को मिल रहा है । युवा पीढ़ी पर इस बीमार और भ्रष्ट देश को बचाने का उत्तरदायित्व सबसे अधिक है ।